इकाई - 1 (घ)

वैदिक साहित्य में प्राकृत भाषा के तत्व

प्राचीन भारतीय आर्य भाषा का स्वरूप ऋग्वेद की प्राचीन ऋचाओं में सुरक्षित है। भारतीय साहित्य का उषाकाल वैदिक युग को ही माना जाता है। इस युग में आर्यों ने यज्ञ परायण संस्कृति के प्रसार प्राकृतिक शक्तियों के पूजन, देवत्व विषयक भावनाओं के अभिव्यंजन एवम् बौद्धिक चिन्तन से सम्बद्ध विपुल साहित्य का निर्माण किया है। इस साहित्य में जिस छान्दस या वैदिक भाषा का रूप उपलब्ध होता है, वही प्राचीन भारतीय आर्य भाषा है। वैदिक युग की इस भाषा में हमें कोई वैभाषिक प्रवृतियों का संकेत मिलता है, जो तत्काल और तत् प्रदेश की लोकसभा का सूचक है।

यह निर्विवादित है, कि छान्दस भाषा उस समय की साहित्यिक भाषा है, यह जनभाषा का परिस्कृत रूप है। इसमें लोकभाषा के कई विभाषाओं के बीज विद्यमान हैं। यही कारण है, कि ऋग्वेद को तत्कालीन जनभाषा में लिखा गया नहीं माना जाता है। जनभाषा का रूप अथर्वेद में उपलब्ध होता है, उनमें अधिकांश शब्द ऐसे हैं, जिनका व्यवहार जनसामान्य अपने दैनिक जीवन में करता था। शिष्टता एवं रूढ़िवादिता की सीमा से अथर्वेद की भाषा पृथक है।

ध्यातव्य है कि वैदिक काल से ही वैदिक भाषा बोलने वाले आर्य सप्तसिन्धु मध्य प्रदेश से आगे बढ़ गये और उनकी भाषा द्रविड़ एवं मुण्डा वर्ग की भाषाओं से प्रभावित होने लगी थी। ध्वन्यात्मक एवं पदरचनात्मक दृष्टि से उसमें अनेक विशेषताएँ मिश्रित होने लगी थीं। मूर्धन्य, स्वर्ग ध्वनियों, सामासिक प्रवृति एवं प्रत्यय संयोग के कारण संश्लिष्ट रूपों का विकास प्राचीन भारतीय आर्यभाषा में आर्यों का विस्तार के पश्चात् ही हुआ है। यही कारण है कि वैदिक काल से ही विभाषाओं और उपभाषाओं का विकास होता आ रहा है।

वैदिक भाषा के समानान्तर जनभाषा जिसे प्राकृत कहा गया है; निरन्तर विकसित होती गई। इस प्राकृत भाषा का कुछ प्रयोग वैदिक या छान्दस भाषा में दृष्टिगत होता है। उदाहरणस्वरूप :— विकट > विकृत , कीकट > किकृत, निकट > निकृत , दण्ड > दन्द्र , पद > प्रथ, पट् > ग्रथ क्षुल्ल > क्षुद्र आदि।

ये उपरोक्त रूप वस्तुत: प्राकृत या देश्य थें, जो शनैः शनैः वैदिक भाषा में मिश्रित हो गये। इसी प्रकार, 'इन्द्राबरूण, मित्राबरूण, उच्चा, नीचा, पश्या, भोतु, दूडभ, दूलभ आदि

Scanned by CamScanner

प्रयोग भी वैदिक भाषा में प्रादेशिक बोलियों से हो गये हैं। अतएव स्पष्ट है, कि वैदिक काल में भी जनभाषा विद्यमान थी; जिसका प्रभाव छान्दस पर पड़ा है। इससे स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारतीय आर्यभाषा का स्वरूप ऋग्वेद की प्राचीन ऋचाओं वैदिक या छान्दस में सुरक्षित है। मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा के अन्तर्गत छान्दस और संस्कृत के मूर्धन्य ध्वनियों का अस्तित्व प्राकृत तत्वों को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं। जैसे वैदिक या परवर्ती संस्कृत के वे शब्द जिनमें 'न' के स्थान पर 'ण' का प्रयोग हुआ है, प्राकृत रूप हैं। जैसे - आणि, पुण्य, फण, काण, कण, निपुण, गुण, कुणार, तूण, वेणु, वेणी शब्दों को भी प्राकृत का ही माना जाता है।

वैदिक या छान्दस भाषा में 'र' का 'ल' ध्वनि रूप में विकास पाया जाता है। वहीं 'ल' ध्वनि दन्त्य ध्वनि से मिलकर उसका मूर्धन्य भाव कर देता है। छान्दस में 'ल' वाली प्रवृत्ति पायी जाती है, जो प्राच्य भाषा या प्राकृत का प्रभाव है।

वैदिक या छान्दस भाषा के 'शिथिल' शब्द में इकार का होना भी पूर्वीय प्रवृति के साथ प्राचीन प्राकृत का अस्तित्व सिद्ध करता है। यह एक सामान्य सिद्धांत है कि कोई भी नयी जाति पुरानी निवासियों के सम्पर्क से सामाजिक और सांस्कृतिक विकास करती है। वनस्पति, पशुसृष्टि, भौगोलिक परिस्थिति प्रतिदिन के रीति-रिवाज एवम् धार्मिक मान्यताएँ आर्यों ने आर्येत्तरों से ही ग्रहण की होगी। फलतः उनका शब्द भण्डार अनार्य भाषाओं के सम्पर्क से पुष्ट एवम् समृद्ध हुआ होगा। इस प्रकार, छान्दस साहित्य में प्राकृत भाषा के तत्वों का समावेश आर्यों के आगमन काल से ही चला आ रहा है।

उपरोक्त विश्लेषणोपरान्त यह कहा जा सकता है, कि वैदिक भाषा में प्राकृत के कतिपय कुछ तत्वों को समाविष्ट किया गया है।

Scanned by CamScanner